Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:3.021 website: www.researchguru.net
Volume-11,Issue-3,December-2017

दलित मिथक और वर्चस्व की वैचारिकी

अनराग कुमार पाण्डेय
पी.एच.डी. समाजशास्त्र
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
ई.मेल - anurag.100pandey@gmail.com

मिथक का संबंध अप्राकृतिक घटनाओं से होता है। प्राचीन काल से ही प्रचलित कहानी, प्रतीकों से परिपूर्ण कथाओं, अनुष्ठानों आदि के आधार पर मिथक एक पवित्रता से भरे विश्वास का सृजन करते हैं। ये एक प्रकार के परंपरागत आख्यान होते हैं, जिनमें मानवीय मूल्य सुरक्षित रहते हैं। मिथकों के माध्यम से मानव मस्तिष्क और उसकी सभ्यता के मूल तत्वों व उसके विकास की प्रक्रिया का भान होता है। ये धार्मिक मिथक वेद, पुराण, उपनिषद तथा धर्म ग्रन्थों में प्रचलित कथाओं, गाथाओं, सूक्तियों, विवरणों आदि और स्थानीय व वृहत स्तर की लिखित, अलिखित तथा मौखिक परंपराओं की किंवदंतियों, लोकोक्तियों आदि में विश्वास तथा आस्था की भावनात्मक अभिव्यक्ति के तौर पर निर्मित, व्यवस्थित, पुनर्निर्मित और परिवर्तित होते रहते हैं। मिथकों का संसार और संसार में मिथकों की व्याख्या एक लंबे काल से क्रियाशील रही है। हमारे समाज में मिथक सदैव से ही विभिन्न किंवदंतियों, फंतासी, अनुष्ठान/संस्कार, कर्मकांड आदि के रूप में मार्गदर्शन व नियंत्रण का साधन रहे हैं। तत्कालीन समय में समाज धर्म, विश्वास और परंपरा द्वारा संचालित था, परंतु अब समाज विज्ञान, तकनीक और सूचना द्वारा संचालित होता है और यह समय अतीत से बिल्कुल भिन्न प्रकृति वाला है। वर्तमान समय में तकनीक, ज्ञान, सूचना आदि क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तनों ने कमोबेश रूप में सभी क्षेत्रों को परिवर्तित किया है।

70 से 90 के दशक में क्रियाशील परिवर्तनों का एक दौर चल रहा था। ये परिवर्तन चाहे पहली गैर-कांग्रेसी पार्टी के रूप में राजनीतिक फलक का हो, चाहे, पश्चिमीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण व आधुनिकीकरण के रूप में सामाजिक-सांस्कृतिक व आर्थिक फलक का हो, चाहे उदारीकरण, निजीकरण व वैश्वीकरण के रूप में आर्थिक-सामाजिक फलक का हो, चाहे आरक्षण-नीति के संवर्धन के रूप में सामाजिक-आर्थिक फलक का हो। इन परिवर्तनों ने भारतीय पारंपरिक संरचनाओं को कमोबेश रूप में तोड़ने का काम किया। ये बदलाव जातिगत संरचना, धार्मिक कर्मकाण्डों और मिथकों के प्रति लोगों के दृढ़ विश्वास को कमजोर करने की दिशा में उन्मुख हुए। इस संक्रमणकालीन अवस्था का परिणाम यह हुआ कि जातिगत

संरचनाएँ आंशिक रूप से ही सही परंतु शिथिल अवश्य हुईं, धार्मिक कर्मकाण्डों के प्रति विश्वास में कमी आयी और जातीय संस्तरण की निम्न जाति में पारंपरिक मिथकों के प्रति अविश्वास और द्वेष की भावना उत्पन्न हुई। इसकी प्रतिध्वनि निम्न जातियों द्वारा स्वयं के मिथकों की रचना के रूप में परिलक्षित होती है।

नवीन मिथकों के विषय-वस्तु की तैयारी

मिथकों के संदर्भ में नवीन क्षेत्रों में भी परिवर्तन लाये जा रहे हैं। इसके लिए स्थानीय लोग, क्षेत्रों का एक इतिहास, मिथक और अतीत गढ़ रहे हैं और इसी अतीत की मदद से वे अपने इतिहास को पुनर्परिभाषित कर रहे हैं। एक ऐसा इतिहास जो उनके विश्वासों, महत्वाकांक्षाओं और मानकों द्वारा रचित होगा। इस इतिहास का सैद्धांतिक जुड़ाव तो महावृत्तांतों से अवश्य होगा, जो कि उसकी वैधानिकता के लिए आवश्यक है, लेकिन इस इतिहास की व्यवहारिक पृष्ठभूमि एक पृथक आयाम के साथ प्रस्तुत होगी। इस प्रक्रिया के माध्यम से एक ऐसे समग्र का निर्माण करने का प्रयास किया जा रहा है जिसका अस्तित्व द्विज या स्पष्ट तौर पर कहें तो ब्राह्मणवादी विचारों से पृथक, विशेषाधिकारों से मुक्त रूप में रहेगा।

राहु[1] असुर से संबंधित किंचित मामलों के इतर अन्य मामले भी प्रसिद्ध हुये हैं, जिनमें द्विज जातियों की छवि निर्माण होने के साथ राहु की एक अलग छवि का निर्माण संस्तरण की निम्न जाति में भी संभवतः रच गई। भक्षक और अपवित्र के रूप में निराकृत होने पर भी राहु ने हिन्दू पदानुक्रम के निचले स्तर पर ही सही, पर एक व्यापक अनुयायी समुदाय संग्रहीत कर लिया। इन प्रमाणों का विस्तार 19वीं शताब्दी के आरंभ में **बुकानन-हैमिल्टन** से लेकर ब्रिटिश राज के आखिरी पचास वर्षों के दौरान अनेक प्रशासकों व मानवजाति-वैज्ञानिकों के लिखे अवलोकनों तक है (अमीन एवं पाण्डेय, 1995:20)। सभी विद्वानों द्वारा यह माना गया है कि ग्रहण से जुड़ी प्राचीन धारणाएँ वर्तमान समय में भी कई जातियों की विश्वास-व्यवस्था में अस्तित्व रखता है, यथा- डोम, दुसाध, भंगी और मांग जातियों में यह विश्वास आज भी प्रचलित है। 75 साल पहले एक पर्यवेक्षक द्वारा उनकी दशा का विवेचन कुछ इस प्रकार से किया गया था-

> वह (डोम) अरहर के खेत में पैदा होता है, बचपन से चोरी की तालिम पाता है। आरंभ से बहिष्कृत भटकता है। कल उसके पास सिर पर छत और पेट में रोटी होगी या नहीं, यह भी उसे पता नहीं होता। निरंतर पुलिस से छिपता, भागता, गावों से निकाला जाता, अपने डेरे बदलता रहता है। हिन्दू धर्म उस तक पहुँचने में असफल रहा। सभ्यता की बढ़त ने उसे अधोगति के गड्ढे में और अंदर ढकेल दिया है (वही)।

चांडालों और श्वपेचों के बारे में मनुस्मृति की धारणा से यह विवरण पूरी तरह मेल खाता है और अनेक विद्वानों के अनुसार यही चांडाल और श्वपेच ऊपर वर्णित जातियों के पूर्वज थे-

[1] राहु, हिन्दू मिथकों के अनुसार उस असुर का कटा हुआ सिर है, जो ग्रहण के समय सूर्य या चंद्रमा को निगल लेता है।

> ... चांडाल और श्वपेचों के घर गाँव की सीमा के बाहर ... उनकी संपत्ति कुत्ते और गधे होंगे। उनका पहनावा मुर्दे उतारे वस्त्र होंगे, वे टूटे-फूटे बर्तनों में खाना खाएँगे। लोहे के आभूषण पहनेंगे और हमेशा एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकते रहेंगे। रात कों वे गाँव या कस्बों में नहीं फिरेंगे (वही)।

यह स्पष्ट है कि समय बीत जाने के बाद भी डोम तथा इससे संबंधित लोगों की सामाजिक प्रस्थिति में कोई विशेष बदलाव नहीं हुआ है। मिथकों के आधार पर उन्होंने न सिर्फ अपनी एक ऐतिहासिक स्थिति को जान लिया है बल्कि उन्हीं मिथकों से अपने एक पृथक आदर्श नायक को भी तलाश लिया है जो महाग्रंथों द्वारा रचे मिथकों की अपेक्षाओं के प्रति विरोधाभास स्थिति को उत्पन्न कर रहे हैं।

शासकीय संस्कृति में जो पौराणिक चरित्र बिल्कुल निम्न और अवांछनीय माने गए हैं उन्हें ही ये जातियाँ अपना नायक मानकर पूजने की आध्यात्मिक कोशिश करती हैं। देश के पश्चिम में यह माना जाता है कि वहाँ की एक देवी बोल्हाई (कोरा) डाकुओं के साथ चली गई थी। यह इस बात का सूचक है कि बोल्हाई बड़े समय तक इन आदिम जनजातियों की रक्षक देवी मानी जाती रही होगी (वही)। यह प्रथा ठीक उसी तरह है जैसे दुसाध जाति के लोग गौरेया और सलेश नामक लुटेरे को पूजते हैं (वही)। गंडक नामक चोर, जिसे अपने अपराधों के लिए फांसी पर चढ़ा दिया गया था, मरने के बाद अपने साथी समैया के साथ मघैया डोमों का पूज्य बन गया (वही)। डाकुओं का सरदार स्यामसिंह पूरे डोम परिवार का रक्षकदेव और पूर्वज माना जाता है (वही)। ये सभी इन जातियों के इतिहास और इनके पूर्वजों से संबंधित तथ्य के गवाह हैं।

भारतीय समाज की उच्च और मध्य जातियों के भी अपने-अपने जातीय इतिहास हैं, इस इतिहास को व्याख्यायित करके के लिए 'जाति पुराण' की रचना की गई है। हालांकि, ये कथाएँ मौलिक व श्रुति परंपरा का अंग तो हैं ही, लेकिन कई अवसरों पर वे लिखित रूप में भी अभिव्यक्त हो चुकी हैं। ये जाति पुराण, द्विज जातियों को समाज में एक विशिष्ट दर्जा प्रदान करते हैं और मिथकों के माध्यम से अपनी संकल्पना को वैधता प्रदान करने करते हैं। ये कथाएँ, पौराणिक कथाओं से जुड़ी रहती है, जिसमें हर जाति अपने-आपको किसी महान पौराणिक ऋषि-मुनि अथवा किसी मिथकीय नायक से जोड़कर देखती है। विशुद्ध पौराणिक वृत्तान्त की शैली न अपनाकर ये जाति पुराण कुछ नकलची अंदाज में ब्राह्मणवादी 'महावृत्तांतों' में अपने लिए एक विशिष्ट जगह बनाने का प्रयास करते हैं (नारायण, 2002)।

ठीक इसी प्रकार निचली जातियों के लिए भी समान्यतः 'जाति-बिरादरी की कथा' या 'जाति कथा' की संकल्पना रहती है (दास, 1977)। ये आमतौर पर उनके लोक-साहित्यों पर आधारित होती है और ये महावृत्तांतों से अलग एक विरोधाभासी प्रवृत्ति को जन्म देती हैं। इन समानान्तर इतिहासों में एक वैकल्पिक धारा गढ़ने का प्रयत्न परिलक्षित होता है, हालांकि कहीं-कहीं मुख्य धारा के साथ बहने की इच्छा भी दिखाई देती है और इसका एक कारण ब्राह्मणवादी और पौराणिक वृत्तान्तों को लेकर एक तरह की उभयमुखता, एक तरह का अस्पष्ट रवैया भी है (नारायण, 2014: 39)। यह अस्पष्टता का भाव सभी जातियों में उनके सामाजिक-सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रस्थिति के आधार पर ही दिखाई देता है। इस तरह, इन

जातियों द्वारा रचित और लिखित इतिहास, जो वर्चस्वशाली वर्गों के इतिहास के बाहर हाशियों में सिमटे रहे हैं, सामग्री के विषय और प्रस्तुति के मामले में अलग-अलग रूपों में विकसित होते रहे हैं (वही)।

भारतीय जातीय संरचना में संस्तरण की निम्न जाति द्वारा कुछ नायक और उनसे जुड़े मिथकों को गढ़ा जा रहा है और इनसे संबंधित कथाएँ अपने-आपको प्रचलित महान वृत्तान्तों से जोड़ने का प्रयास करती हैं। इसके साथ-साथ वे एक ऐसी आधारशिला का सृजन और उसका विश्लेषण करने का प्रयास करते हैं जो ऊँची जातियों द्वारा उन्हें हाशिये पर धकेल दिये जाने के लिए उत्तरदायी तथ्यों की व्याख्या भी कर सके। उदाहरण के लिए, चमार अपनी जाति की उत्पत्ति की कथायें कुछ इस तरह से सुनाते हैं -

- एक राजा था, उसकी दो बेटियाँ थीं- चामू और बामू। दोनों का एक-एक हृष्ट-पुष्ट और बलवान बेटा था। एक दिन महल के मैदान में एक हाथी मर गया और राजा उसके शरीर के टुकड़े नहीं करना चाहता था, इसलिए उसने पता लगाया कि क्या कोई, राज्य में इतना बलवान व्यक्ति है जो उसके शव को उठाकर ले जा सके और जमीन में दफन कर सके। चामू के बेटे ने यह काम कर दिखाया, जिसके बाद बामू के बेटे ने उसे अछूत घोषित कर दिया। चामू के वंशजों को चमारों के नाम से जाना जाने लगा (वही: 41)।
- पाँच ब्राह्मण भाई थे, एक दिन जब वे घूमने निकले तो रास्ते में उन्होंने एक गाय मरी हुई देखी। चार भाई तो मृत गाय से आँख बचा कर निकाल गए लेकिन पाँचवे भाई ने उस गाय को वहाँ से हटा दिया। इसी बात पर अन्य चार भाइयों ने उस पाँचवे भाई को जाति से बाहर निकाल दिया। आज के चमार उसी पाँचवे भाई के वंशज हैं (सिंह, 2009: 24)।
- सृष्टि के शुरू में सिर्फ एक ही परिवार था। उस परिवार के सब लोग सर्वोच्च जाति के थे। उस परिवार में चार भाई थे, एक दिन एक गाय मर गई। मृत गाय शाम तक आँगन में पड़ी रही। जब कोई भी उस गाय को हाथ लगाने को तैयार नहीं हुआ तब सभी भाइयों ने विचार-विमर्श किया। तीन बड़े भाइयों ने फैसला सुनाया कि छोटा भाई इस मरी पड़ी गाय को बाहर ले जाएगा। उसके बाद स्नान करके पूर्व की तरह वह सम्मान सहित घर में । काफी मेहनत के बाद छोटा भाई जंगल तक उस मृत गाय को घसीटता हुआ ले गया लेकिन जब वह स्नान करके घर लौटा तो उसके भाइयों ने उसे घर में रखने से मना कर दिया। उसने इसका विरोध भी किया लेकिन दूसरी तरफ तीन थे, वह अकेला क्या करता ? अब उसे आदेश मिला कि वह मरे हुए पशुओं को ही उठाएगा और उनकी खाल निकाल कर अपना जीवन यापन करेगा। उसकी ही संतति चमार हैं (वही: 24-25)।
- कुमार, सनक, सनदन और सनत नमक चार भाई थे। उन्होंने एक दिन एक वैदिक अनुष्ठान किया। यज्ञ में पशुबलि दी गई। उस समय बड़े भाई कुमार की पत्नी गर्भवती थी। पत्नी ने कुमार से कहा कि मुझे इस मरे हुए पशु का मांस खाने की इच्छा हो रही है। कुमार ने यज्ञ की बलि में मारे गए पशु का कुछ मांस काटकर उसे खिला दिया। जब प्राण प्रतिष्ठा अनुष्ठान हुआ तो वह पशु पुनः जीवित हो उठा, लेकिन जितना मांस कुमार ने काट लिया था उस पशु का उतना हिस्सा गायब था।

अन्य तीन भाइयों ने देखा कि यह तो पाप कर्म है। उन्होंने छानबीन की, बाद में कुमार ने स्वीकार किया कि उसने अपनी पत्नी की इच्छा के लिए ऐसा किया था। इस पाप के लिए अन्य तीन भाइयों ने कुमार को निम्न तीन सजाएँ सुनाई (वही: 25)-

- अब बड़ा भाई दक्षिण दिशा की तरफ हमसे दूर रहेगा।
- अब वह मृत पशुओं का मांस खाएगा तथा उनसे ही अपनी आजीविका चलाएगा।
- कुमार ने यह पाप अपनी पत्नी के कहने पर किया है, अतः अब उसकी पत्नी सब औरतों के बच्चे पैदा होने पर उनकी सेवा करेगी।

यदि इन सभी प्रचलित क्षेत्रीय कथाओं को ध्यान से देखा जाय तो कुछ ऐसे तत्व हैं जो लगभग सभी में सामान्य हैं। इन कथाओं के माध्यम से एक ओर नए प्रतिमानों को तो गढा ही जा रहा है वहीं दूसरी ओर उनको सामाजिक धरातल पर वैधता भी देने का प्रयास किया जा रहा है। ये सभी न केवल चमार जाति को बल्कि पूरे संस्तरण की निम्न जाति का प्रतिनिधित्व करती हैं और इन सभी कथाओं में द्विज जातियों के प्रति द्वेष की भावना भी दृष्टिगोचर होती है -

- ❖ इन सभी लोक कथाओं में दलित जाति को द्विज जाति से छले जाने की भावना दिखाई देती है, साथ ही साथ यहाँ उन्हें उपयुक्त प्रस्थिति से वंचित किए जाने की रणनीति भी दिखाई पड़ती है।
- ❖ इनमें चमार जाति को बहिष्कृत करने के पीछे पशु को छूने या खाने की कथा का प्रयोग किया गया है और उसे ही उनका व्यवसाय बनाने की भी कवायद की गई है।
- ❖ लगभग सभी कथाओं के माध्यम से एक ऐसे मिथक की रचना करने का प्रयत्न किया गया है जिसके माध्यम से यह स्पष्ट किया जा सके कि वे अन्य सभी जातियों के (द्विज जातियों के) समान प्रस्थिति पर काबिज थे और उन्हें इससे वंचित कर दिया गया है।

चमार कई महत्वपूर्ण ऐतिहासिक व्यक्तियों को अपनी जाति के साथ जोड़कर अपनी जाति को महिमाण्डित करने की कोशिश करते हैं। बद्री नारायण द्वारा किए गए क्षेत्र कार्य के अनुसार, इलाहाबाद के पास शहाबपुर गाँव में रहने वाले पचास वर्षीय और अर्द्धशिक्षित भुल्लर, जो पूर्वी उत्तर प्रदेश के चमारों के प्रिय पंथ रविदासी पंथ का अनुयायी है, ने बताया, *"चर्मवंश का 1,78,000 वर्षों तक पूरे उपमहाद्वीप पर राज रहा है। जातीय वंशावली के अनुसार शम्बूक, सूपकदास, रविदास, हरीशदास, मोरध्वज और एकलव्य इत्यादि शूद्र गोत्र से संबंध रखते थे। हालांकि एकलव्य को निषाद जाति का माना जाता है, लेकिन वे भी एक शूद्र थे। सभी ऋषि-मुनि शूद्र जाति में ही पैदा हुए थे। वाल्मीकि और पराशर भी शूद्र थे और सम्राट अशोक भी। उनका स्तम्भ आज भी अजर-अमर है* (नारायण, 2014: 41)।"

पूर्वी उत्तर प्रदेश देश में पासी समुदाय अपनी उत्पत्ति को ऋषि परशुराम से जोड़कर देखता है, जबकि परशुराम एक मिथकीय ब्राह्मण तपस्वी थे और वे अपने क्रोध और पराक्रम के लिए प्रसिद्ध थे। समुदाय के सदस्यों का कहना है कि वे परशुराम के पसीने से पैदा हुए थे लेकिन परशुराम ने उन्हें अपना नाम देने या उन्हें अपनी संतान स्वीकार करने से इनकार कर दिया। इससे संबन्धित कथा इस प्रकार से है-

जब परशुराम की माँ प्रसूति गृह में उन्हें जन्म देने की प्रक्रिया में थी तो कमरुकमच्छ नामक एक कसाई गाँव की 1600 गायों को गाँव से भगा ले जाने लगा। गाँव वालों ने परशुराम की माँ से शिकायत की, लेकिन वे इस हालत में नहीं थीं की वह उनकी मदद कर सके। यह देखकर परशुराम माँ के गर्भ से बाहर निकले और नाभि-नाल कटे बिना ही कसाई से लड़ने लगे। वे बहदुरी से लड़े और लड़ते-लड़ते उन्होंने अपना सिर जोर से हवा में हिलाया। जहां उनका पसीना गिरा था, वहाँ पाँच पासी पैदा हो गए और वे भी कसाई से लड़ने लगे। आखिर कमरुकमच्छ मारा गया और गायों को आजाद करा लिया गया। पांचों पासियों ने परशुराम से अनुरोध किया कि वे उन्हें अपने साथ घर ले जाएँ, लेकिन परशुराम ने कहा कि वे उनकी देखभाल नहीं कर सकते, क्योंकि अभी उनकी नाल नहीं कटी हुई है। यह सुनकर पासियों ने कहा कि उनके पास खाने के लिए कुछ भी नहीं है, आखिर वे खाएं तो क्या खाएं। परशुराम ने कहा कि वे सूअरों के शरीर का पृष्ठ भाग खा सकते हैं और चन्दन के लेप में भिगोकर इसे शुद्ध कर सकते हैं। परशुराम की इस सलाह पर अमल करके पासी बहुत बलवान बन गए। पूरे देश में उनकी टक्कर का कोई भी व्यक्ति नहीं था। एक दिन भगवान विष्णु नारद मुनि के साथ हाथी पर बैठकर वहाँ से गुजर रहे थे। पासियों को खेलते देखकर नारद मुनि ने गुस्से से उनसे पूछा कि वे क्या कर रहे हैं। पासियों ने हाथी की पूंछ पकड़ ली, जो देखते-ही-देखते टूटकर उनके हाथों में आ गयी। यह देखकर नारद मुनि ने भगवान विष्णु से कहा कि ये लोग बहुत शक्तिशाली मालूम पड़ते हैं और अगर इन्हें रोका नहीं गया तो बहुत जल्दी पूरी पृथ्वी पर इनका नियंत्रण हो जाएगा (वही)।

एक दिन नारद मुनि, जो एक ब्राह्मण थे, अकेले ही उस तरफ चले आए। उस समय पाँचों पासी सूअर के मांस का भोजन करने वाले थे। नारद ने कच्चा मांस खाने के लिए उनकी खिंचाई की और कहा कि अगर वे इसे भूनकर और नमक लगाकर खाएँगे तो यह कहीं अधिक स्वादिष्ट हो जाएगा। भोले-भाले पासियों ने नारद की सलाह मान ली और मांस को भूनकर और नमक लगाकर खाने लगे। उसी दिन से उनकी शक्ति कम होनी शुरू हो गई। नारद ने भगवान विष्णु से कहा कि अब देखते हैं कि पासी क्या कर सकते हैं। इस बार पासियों ने हाथी की पूंछ खींचने की कोशिश की तो वे इसे तोड़ने में असफल रहे, वे अब पहले की तरह बलवान नहीं रहे। उनकी शक्ति क्षीण हो चुकी थी (वही)।

शाहबपुर में पसियापुर नामक बस्ती में कथा इस तरह से व्यवस्थित करके सुनाई जाती है कि एक ओर तो यह परंपरा महावृत्तांतों से अपने जुड़ाव को भी प्रदर्शित कर सके और वहीं दूसरी ओर इसका जुड़ाव समाज में अवहेलना के दलदल में धकेलने के ब्राह्मणवादी दर्शन के विरोधी कुंठा से भी प्रदर्शित हो सके।

चमार समुदाय स्वयं को संत रविदास से अंतर्संबंधित मानते हुये गौरवान्वित महसूस करता है। वे सभी जातियों के दलित-पुरुष के रूप में माने जाते हैं। वहीं भंगी समुदाय अम्बेडकर को खुद से जोड़कर देखते हैं, जबकि वे महाराष्ट्र की महार जाति के थे, जो उत्तर प्रदेश के चमारों जैसी ही एक जाति है (नाथ,

2000)। धनुक एक अन्य छोटी अछूत और उपेक्षित जाति है। इसने भी अपनी जातीय पहचान को स्थापित करने के लिए मिथकीय पात्रों का सहारा लिया है। धनुकों ने नायक/नायिका के रूप में पन्ना धाय को गढ़ा है। पन्ना धाय, चित्तौड़ के महाराजा राणासांगा के महल में काम करती थी। प्रचलित कथा के अनुसार, उन्होंने राणासांगा के पुत्र कुँवर उदय सिंह के प्राणों की रक्षा के लिए अपने इकलौते पुत्र की कुर्बानी दे दी, ताकि चित्तौड़ राज्य शत्रुओं से बच सके। पन्ना धाय अब इस पूरे समुदाय की जाति-नायिका बन गई हैं, जो उत्तर प्रदेश के इटावा, फर्रुखाबाद, कानपुर, एटा, मैनपुरी और फिरोजाबाद जिलों में बसा हुआ है तथा अब उनकी स्मृति में प्रति वर्ष महोत्सवों और अन्य कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है (वही)।

दलित समुदाय अपने जाति-नायकों को पहचानने और उजागर करने के लिए लोक-साहित्य की भी सहायता ले रहे हैं। लोक-साहित्यों में एक प्रेमकथा का नायक सोमनायक बंजारा है, जो उत्तरी बिहार और नेपाल की सीमा में बसे बंजारा जाति में विख्यात प्रेमकथा का प्रमुख पात्र है। उत्तर प्रदेश में गोंडा और बहराइच के बंजारे भी सोमनायक को अपना जाति-नायक मानते हैं। इस प्रेमकथा में नायक, समुदाय के कुछ अन्य सदस्यों के साथ व्यापार करने चला जाता है तथा अनेकों बाधाओं व कठिनाइयों के बाद वह न सिर्फ व्यापार में सफलता प्राप्त करने में, बल्कि अपनी प्रेमिका को पाने में भी सफल रहता है (दास, 1995)।

इसी तरह बिहार के मिथिला अंचल के मुसहरों[2] में दीना-भदड़ी की कथा अत्यंत प्रसिद्ध है। यह कथा दीना और भदड़ी नामक दो बहादुर भाइयों के सामाजिक संघर्ष पर आधारित है, जिन्होंने मध्य युग में कई ऊँची जातियों की सेनाओं को पराजित किया था (नारायण, 2014: 45)। मुसहर अपनी जाति की उत्पत्ति के लिए देवसी और शबरी को भी मिथकीय नायक के रूप में अपनाते हैं। उत्तर प्रदेश में पिपरी और मिर्जापुर के आस-पास के क्षेत्रों में मुसहर अपने-आपको कोल जनजाति, जिसे चेरु के नाम से भी जानते हैं, की एक शाखा मानते हैं और खुद को मिथकीय चरित्र देवसी (दियोसी) के वंशज मानते हैं (वही: 46)। बिहार के गया और मगध अंचलों में मुसहर अपने-आपको महावृत्तांत रामायण की पात्रा शबरी[3] (सवरी) के मिथक से जोड़कर देखते हैं और स्वयं को लगभग भुलाई जा चुकी जाति के वंशज के रूप में प्रदर्शित करते हैं, उनसे जुड़े इन मिथकों और नायक-नायिकाओं की कथा को गाथाओं या बिरहाओं और किस्सों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है (वही)।

दुसाध जाति अपने-आपको बिहार के तीन लोकप्रिय बिरहाओं और उनके नायकों 'रेशमा-चूहड़मल', 'सल्हेटा' और 'कुँवर विजयमल' से जोड़कर देखती है (वही)। वे मेलों-उत्सवों के उपलक्ष्य पर भी इन जाति-नायकों को याद करते हैं। बिहार और उत्तर प्रदेश में इन जाति-नायकों की मूर्तियाँ स्थापित करके और इनके नाम पर सामाजिक-राजनीतिक संस्थाएं बनाकर भी इनकी स्मृति को जीवित रखने का प्रयास किया जा रहा है (वही)।

---

[2] चूहों पर जीवित रहने वाली एक अर्द्ध घुमंतू जाति।

[3] शबरी एक भिलनी थी। उसका स्थान प्रमुख रामभक्तों में है। वनवास के दौरान राम-लक्ष्मण ने शबरी का आतिथ्य ग्रहण किया था और उसके द्वारा प्रेम पूर्वक दिए हुए जूठे बेर का सेवन किया था।

बिहार के दुसाध सहलेस और चुहड़मल की पूजा करते हैं और डोम रैया रणपाल को पूजते हैं। सहलेस एक अत्यंत प्रिय लोक-नायक हैं, जो संस्तरण की निचली जाति दुसाध जाति से संबंधित हैं। उनकी कथा दरभंगा, मधुबनी, समस्तीपुर, मुंगेर के जिलों में और नेपाल से जुड़े तराई क्षेत्रों मोरांग, विराट नगर, जयनगर, राप्ती और अन्य सीमावर्ती जिलों में खूब प्रचलित है (नारायण, 2014: 149)। इन क्षेत्रों में उन्हें एक ऐसे भगवान के रूप में पूजा जाता है जो अपने भक्तों की मनोकामना पूरी कर सकते हैं। एक मान्यता के अनुसार, हर वर्ष सतुआनी के दिन आयोजित होने वाले मेले के दौरान सहलेस की प्रेयसी दोना के फूलों के रूप में पृथ्वी पर आती है। ये फूल ठीक मेले की जगह पर 'हरम' नामक एक पेड़ पर खिलते हैं। एक दूसरी मान्यता के अनुसार यदि कोई घोडा-गाड़ी या बैल-गाड़ी कीचड़ में फंस जाए तो 'जय सहलेस' या 'जय राजाजी' का उद्घोष करते ही वह आसानी से बाहर निकल जाता है (वही: 150)। पूजा-पाठ के लिए भक्त को विशेष प्रकार के परिधान को पहनने का रिवाज है, जिसमें कमर के ऊपर का हिस्सा नग्न रहता है और कमर के नीचे वह लाल रंग का एक लंगोट पहने रहता है (वही: 151)। पूजा का आरंभ सहलेस और दुसाधों के अन्य देवी-देवताओं के नाम प्रार्थनाओं से होता है। इसके अलावा मंत्रोच्चारण व शारीरिक मुद्राओं की भी एक नियोजित व्यवस्था का समावेश होता है (वही: 151-152)।

निषाद मल्लाह जाति की एक उपजाति है और यह एक जल-केन्द्रित व्यावसायिक समुदाय है। ये लोग प्राचीन युग में अपनी उच्च सामाजिक प्रस्थिति को संदर्भित करने के लिए गौरव गाथाओं का उल्लेख करते हैं। निषादों को वेदव्यास का वंशज माना जाता है, जिन्होंने 18 पुराणों के साथ-साथ महाग्रंथ 'महाभारत' की भी रचना की थी (वही: 115)। कल्पी में व्यास जी का एक मंदिर है, जहां उनकी मूर्ति की स्थापना की गई है। उनके मंदिर के पास एक गाँव है मदारपुर, जहां निषाद समुदाय के लोग रहते हैं (वही)। तुलसीदास रचित 'रामचरितमानस' के अनुसार वनवास काल के दौरान भगवान राम की निषादराज से मित्रता हो गई थी। ऐसा माना जाता है कि भगवान राम ने निषादराज का आतिथ्य स्वीकार कर लिया था और श्रिंगवेरपुर में एक रात बितायी थी। इसके बाद निषाद उन्हें गंगा नदी को पार करने में मदद करते हैं। गंगा को पार करने के बाद भगवान राम सदियापुर गए, जो निषादों का गाँव हैं। इस मिथक के समर्थन में 'रामचरितमानस' की एक चौपाई को उद्धृत किया जाता है, जो इस प्रकार है (वही: 116)-

उतरि ठाढ़ भए सुरसरिरेता ।
सीय रामु गुह्य लखन समेता ।।

अपने गौरवशाली इतिहास के संदर्भ में निषाद एकलव्य[4] की कथा का भी उल्लेख करते हैं, जो प्रसिद्ध पौराणिक महावृत्तांत 'महाभारत' का एक पात्र है। उनका मानना है,

> एकलव्य निषाद जाति के थे और पांडवों-कौरवों के गुरु द्रोणाचार्य से धनुर्विद्या सीखना चाहते थे, लेकिन द्रोणाचार्य ने उन्हें अपना शिष्य स्वीकार करने से इंकार कर दिया, क्योंकि वे सिर्फ राजाओं या क्षत्रियों के पुत्रों को ही शिक्षा देते थे। इसके बाद एकलव्य ने जंगल में द्रोणाचार्य की मिट्टी की

[4] एकलव्य हिरण्य धनु नामक निषाद की संतान है और उसे एक महान धनुर्धर का गौरव प्राप्त है।

मूर्ति बनाकर उसके सामने अभ्यास करना आरंभ कर दिया। जल्दी ही वे धनुर्विद्या में अत्यंत निपुण हो गए। एक दिन द्रोणाचार्य अपने शिष्यों के साथ जंगल में आए। उनके साथ उनके प्रिय शिष्य अर्जुन भी थे, जो पृथ्वी पर सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर के रूप में उभर रहे थे। एकलव्य की धनुर्विद्या को देखकर द्रोणाचार्य अर्जुन के भविष्य के लिए आशंकित हो उठे। एकलव्य को रोकने के लिए गुरु द्रोण ने गुरु-दक्षिणा के रूप में उसके अंगूठे की मांग की। एकलव्य ने बिना कुछ सोचे-समझे अपने अंगूठे को काट कर उनके समक्ष रख दिया (वही)।

निषाद इस कथा के माध्यम से एकलव्य की दानवीरता को रेखांकित करते हैं। इसके अतिरिक्त इस कथा के माध्यम से क्षत्रिय न होने के कारण उनके साथ भेद-भाव को भी प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया है। उनके साथ हुए छल को स्पष्ट करने की मनोदशा यहाँ सुस्पष्ट रूप से अवलोकित हो रही है।

निषादों के यहाँ एक अन्य मिथक नायक कालू धीवर हैं। उनका मानना है कि कालू धीवर महर्षि नारद मुनि के गुरु थे। नारद ब्राह्मण थे जबकि कालू धीवर मल्लाह जाति के थे। उनके पिता का नाम कौंडव और माता का नाम श्यामादेवी था। निषादों के अनुसार,

भगवान विष्णु ने नारद को पृथ्वी पर जाकर किसी मनुष्य को अपना गुरु बनाने का आदेश दिया। नारद ने कहा कि वे किसी मनुष्य को अपना गुरु कैसे चुन सकते थे क्योंकि पृथ्वी के सभी मनुष्य तो भगवान के भक्त थे। तब भगवान विष्णु ने कहा कि उन्हें पृथ्वी पर जो भी पहला मनुष्य दिखे, उसे ही अपना गुरु बना लें। यह पहला मनुष्य कालू धीवर ही था, जो मछलियाँ पकड़ने के लिए नदी में जाल बिछा रहा था। आदेशानुसार नारद मुनि ने उसे अपना गुरु बना लिया, लेकिन वे शंका में थे कि वे उससे क्या सीख सकते हैं। इस शंका को उन्होंने भगवान विष्णु के सामने प्रस्तुत की, तो विष्णु ने कहा कि अपने गुरु से सीख लेना उनका कर्तव्य था, अन्यथा उन्हें 84 बार स्त्री की योनि से जन्म लेना पड़ेगा। यह सुनकर नारद पुनः पृथ्वी पर लौटते हैं और कालू धीवर को अपना गुरु स्वीकार करते हैं (वही: 116-117)।

यही कारण है कि निषाद बड़े गर्व से कहते हैं कि पृथ्वी पर भले ही ब्राह्मण को गुरु माना जाता है लेकिन ब्राह्मणों के गुरु तो निषाद हैं (वही: 117)।

अन्य धर्मों के विकास में निषाद का योगदान निषादों के लिए अभिमान की बात है। इस संबंध में हिम्मत राय धीवर के मिथक को संदर्भित किया जाता है, जिन्होंने सिक्ख धर्म के लिए अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया। इस मिथक के अनुसार,

जगन्नाथ पूरी (उड़ीसा) में बाबा हिम्मत राय धीवर का जन्म 1661 में हुआ था। 1699 में एक धर्मसभा को संबोधित करते हुए गुरु गोविन्द सिंह ने 75,000 की भीड़ में से पाँच ऐसे व्यक्तियों को आगे आने के लिए कहा जो उन्हें अपना सर भेंट करने को तैयार हों। इन्हें गुरु गोविन्द सिंह के 'पाँच प्यारे' के नाम से जाना गया। उनमें से एक हिम्मत राय धीवर भी थे। उन्होंने अपने

अनुयायियों की एक बड़ी सेना तैयार की, जो अन्याय और दमन के खिलाफ लड़ने के लिए तत्परता से तैयार थे। हिम्मत राय धीवर मुगलों के खिलाफ लड़ते हुए शहीद हो गए। उनकी शौर्य गाथा अब धीवरों के लिए प्रेरणास्रोत बन चुकी है (कश्यप, 2001)।

पौराणिक, जातीय और सांस्कृतिक मिथकों और प्रतीक-पुरुषों के अलावा दलितों ने राष्ट्रीय आंदोलन से भी अपने नायकों को गढ़ निकाला। निषादों की मिथक कथाओं में तीन नायिकाओं का भी उल्लेख मिलता है- आवंतीबाई लोधं, रानी रसमणि और फूलन देवी। आवंतीबाई बुंदेलखंड की थीं और 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। रानी रसमणि एक निषाद रानी थीं और कलकत्ता में हुगली नदी के किनारे बसे दक्षिणेश्वर की निवासी थीं, उन्होंने कलकत्ता में दक्षिणेश्वर मंदिर की स्थापना की (नारायण, 2014: 117)। इस मंदिर के पुजारी श्री रामकृष्ण परमहंस देव थे, जिनके नाम पर रामकृष्ण मिशन की स्थापना हुई। निषादों की तीसरी नायिका फूलन देवी हैं, जो निषाद जाति की थीं और उच्च जातियों के शोषण और अन्याय से लड़ने के लिए समाज से विद्रोह करके डाकू बन गई थीं। बाद में वे संसद-सदस्य भी बनी, लेकिन उनकी हत्या रहस्यमय ढंग से हो गयी।

दलित मिथकों की परंपरा में कुँवर सिंह, तात्या टोपे, नाना साहब, मंगल पांडे आदि जैसे राष्ट्रीय नायकों का उल्लेख नहीं मिलता, इनके बजाय चेतराम जाटव, बल्लु मेहतर, बाँके चमार, वीरा पासी, झलकारीबाई, उदा देवी और उनके पति मक्का पासी, अवन्तिबाई, महावीरी देवी, मातादीन भंगी और उड़या चमार की कथाएँ सुनने में आती हैं (वही: 47)। दलितों का कहना है कि उदा देवी और उनके पति मक्का पासी ने 1857 के विद्रोह में देश के लिए अपने जीवन की कुर्बानी दे दी, ये दोनों लखनऊ के सिकंदराबाद विद्रोह में शहीद हुए थे। इसके लिए न केवल पासियों को, अपितु पूरे देश को स्वतंत्रता संग्राम में इनकी भूमिका पर गर्व होना चाहिए (पासी, 1996)। वे यह भी दावा करते हैं कि 1857 में अँग्रेजों के खिलाफ विद्रोह की चिंगारी पैदा करने वाला व्यक्ति भंगी था, जिसने मंगल पांडे को बैरकपुर छावनी में विद्रोह करने के लिए अभिप्रेरणा दी थी (नाथ, 1998)। अलीगढ़ में उड़या चमार की कथा, मुजफ्फरनगर में महावीरी देवी की कथा, बुंदेलखण्ड और उत्तर प्रदेश के दलितों में झलकारीबाई की कथा, मध्य उत्तर प्रदेश में उदा देवी की कथा, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बुंदेलखण्ड और चित्रकूट क्षेत्रों में अवन्तीबाई की कथा के रूप में संस्तरण की निम्न जाति के लिए मिथकों की रचना की जा रही है (नारायण, 2014: 47)। इन सभी मिथकीय नायकों/नायिकाओं की सामाजिक व्युत्पत्ति के लिए आधारशिला का निर्माण उनसे संबंधित क्षेत्रों में उनकी मूर्तियों के शिलान्यास और उनकी जाति-कथाओं के माध्यम से की जा रही है।

नवीन मिथकों की रचना में लोक-कथाओं की भागीदारी

लोक-कलाकृतियाँ, दीवारों पर टांगे जाने वाले कला चित्र, टेराटोका और मिट्टी से बनी मूर्तियाँ और विशिष्ट दलित जातियों से जुड़े सांस्कृतिक कार्यक्रम- चमारों का चमरौंधा, पासियों का पसिऔवा, धोबियों का धोबिऔवा इत्यादि, हमेशा से ही दलित संस्कृति के अंग रहे हैं (वही: 71)। प्रत्येक निम्न संस्तरण की जाति

का एक पृथक नायक होता था, जो संबंधित जाति की मौखिक परंपराओं का अंग होता था, गीत-लोकगीत, बिरहाओं और कथाओं आदि के माध्यम से उनका गुणगान औ महिमामंडन किया जाता था। हालांकि इन नायकों की कोई दृश्य छवि नहीं होती थी। इस तरह से ये नायक केवल उनके सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से मानसिक संरचना में ही अपने अस्तित्व को काबिज रखने तक सीमित थे। इन मिथकों और उनसे उपजे नायकों को यथार्थ के धरातल पर संदर्भित करने के लिए आवश्यक था कि उनकी एक मूर्त छवि हो, उनका राजनैतिक अस्तित्व ढूंढा जाए और साथ ही साथ उनका विस्तारीकरण हो।

उत्तर प्रदेश के दलित राजनीतिक चेतना के उदय के बाद, खासकर बहुजन समाजवादी पार्टी के उदय के बाद, जो इन सांस्कृतिक स्रोतों को दलितों के मोबिलाइजेशन के लिए इस्तेमाल करती रही है, हर जाति के नायकों को राजनीतिक स्रोतों में बदला जाने लगा है (नारायण, 2014: 72)। इन्हें दृश्य छवि के रूप में मूर्त बनाकर गाँव-गाँव, क्षेत्र-क्षेत्र और जन-जन तक दलितों की शिक्षित-अशिक्षित आबादी के पास प्रतीक-चिह्न के रूप में पेश किया जा रहा है। ये दृश्य छवियाँ कैलेंडरों, पोस्टरों, पुस्तिकाओं और पैम्पलेटों पर मुद्रित किए गए चित्रों और जगह-जगह स्थापित प्रतिमानों और स्मारकों के रूप में न केवल घर-घर और गली-गली पहुँच रहे हैं बल्कि इन मिथकों को जीवित रखने में भी अपनी एक चेतनापूर्ण भूमिका भी निभा रहे हैं। अपनी राजनीति रणनीति के तहत इसने मिथकों, स्मृतियों और दृश्य संसाधनों के बीच एक ऐसा चक्रदार संबंध स्थापित कर दिया है, जिससे ये तीनों मिलकर दलितों में गर्व और गौरव की भावना पैदा करने का भी काम कर रहे हैं (वही)।

उदा देवी की प्रतिमाएँ उत्तर प्रदेश में कई जगहों पर बहुतायत मात्रा में देखने को मिलती हैं। इसे 1953 में उस समय रचा गया था जब लखनऊ के नेशनल बोटोनिकिल रिसर्च इंस्टीट्यूट (एनबीआरआई) ने शहर के इतिहास पर आधारित एक संग्रहालय की स्थापना की थी (वही: 73)।

मध्य प्रदेश में पासियों में जाति-नायक के रूप में सुहेलदेव बहुत लोकप्रिय है। सुहेलदेव की पहली छवि 1950 में उत्तरी उत्तर प्रदेश में बहराइच के नजदीक जितौरा में कुछ स्थानीय कांग्रेसियों के प्रयासों से अस्तित्व में आयी थी (वही)। प्रयागपुर के स्थानीय राजा ने सुहेलदेव स्मारक स्मृति को 500 बीघा जमीन और जितौरा मील दान कर दी (वही)। पहले यह मूर्ति उद्यान में एक स्मारक के रूप में मौजूद थी, लेकिन आज इस जगह ने एक मंदिर का रूप ले लिया है और मूर्ति ने किसी नेता की मूर्ति का (वही)। लोग दूर-दूर से इस मंदिर में दर्शन हेतु आते हैं और पूजा-पाठ के साथ-साथ जितौरा झील में स्नान भी करते हैं। इस झील को रोगों को दूर करने वाली चमत्कारी झील माना जाता है, खासकर कुष्ठ रोग जैसे असाध्य रोगों को, ऐसा कहा जाता है कि महाराजा सुहेलदेव के वरदान से इस झील में अलौकिक शक्तियाँ आ गई हैं (वही: 74)। श्रद्धालुओं में दलितों के अलावा ऊँची जातियों के लोग भी शामिल हैं। इस प्रकार से यहाँ राजा सुहेलदेव एक देवता के रूप में विराजमान हैं। आरएसएस ने लखनऊ में सुहेलदेव की प्रतिमा का प्रतिस्थापन किया जिसमें सुहेलदेव को महाराणा प्रताप की तरह ही घोड़े पर सवार, लौह-कवच, लौह-मुकुट, युद्ध-अस्त्र आदि से सुशोभित छवि जैसी संज्ञा के रूप में प्रस्तुत किया है (वही)।

महाराजा बिजली पासी, पासियों के राजा थे। ऐसा माना जाता है कि मध्य युग में उत्तर प्रदेश के कई क्षेत्रों में उनका राज था। वे दलितों में एक जातीय गौरव के रूप में विद्यमान हैं और साथ ही साथ यह इस बात का प्रमाण भी है कि दलितों में कुछ राजा हुए हैं। लखनऊ में उनके किले के कुछ अवशेष आज भी मौजूद हैं, जिन्हें बहुजन समाजवादी पार्टी ने एक स्मारक के रूप में बदल दिया (वही)। हर वर्ष बड़ी ही गर्मजोशी के साथ उनका एक विजय-उत्सव भी मनाया जाता है, वहाँ बिजली पासी की एक प्रतिमा स्थापित कर दी गई है, जिसमें उन्हें एक मध्ययुगीन शूरवीर योद्धा की तरह हाथ में धनुष-बाण पकड़े दिखाया गया है (वही)। बिजली पासी की इस मूर्ति की रचना के संदर्भ में एक विशेष किस्सा कांशीराम के निकट सहयोगी नसीमुद्दीन सिद्दीकी सुनाते हैं, उनका कहना है कि जब कांशीराम ने इस मूर्ति की स्थापना करने का फैसला किया तो उन्होंने मूर्तिकारों से कहा कि वे बिजली पासी की मूर्ति में सिक्खों के पाँच प्रमुख गुरुओं गुरुनानक, गुरु अर्जुन देव, गुरु गोविंद सिंह आदि की श्रेष्ठतम विशिष्टताएँ जोड़ने की कोशिश करें (वही: 74-75)। इसके अतिरिक्त उनकी छवि निर्माण में कैलेंडरों और पोस्टरों को भी प्रकाशित किया गया है।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में डॉ. भीमराव अंबेडकर की प्रतिमा की स्थापना दलित आंदोलन की एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। बद्री नारायण द्वारा किए गए आजमगढ़ (उत्तर प्रदेश) क्षेत्र के सर्वेक्षण से पता चलता है कि इन प्रतिमानों की स्थापना से स्थानीय दलित समुदायों में गर्व की भावना पैदा हुई है और उन्हें ऊँची पहचान की स्थापना करने में मदद मिलती है (वही: 75)। अंबेडकर की छवि का जगह-जगह प्रतिस्थापन न केवल उनकी ख्याति और किए गए कार्यों को धरातलीय पृष्ठभूमि तक लाना है बल्कि साथ ही साथ एक ऐसी मानसिक चेतना को भी पैदा करना है जिसमें दलित नायक की छवि का निर्माण हो सके। उनकी छवि निर्माण में कैलेंडरों, पोस्टरों, मूर्तियों, दलित पत्रिकाओं, अखबारों, पुस्तिकाओं आदि के साथ-साथ राजनैतिक चर्चा और नेताओं के भाषणों में उनके गुणगान आदि की प्रमुख भूमिका है। इस प्रकार से आम लोगों में भारतीय गणतंत्र के रक्षक और निर्माता के रूप में अंबेडकर की एक मिथकीय-सी छवि उनके दिमाग में अंकित होती चली जाती है, कुछ जगह उन्हें बुद्ध के अवतार के रूप में देखा जाने लगा, तो कहीं उन्हें ऊँची जातियों से कहीं अधिक ज्ञानी, बुद्धिमान और विवेकशील बताकर महिमामंडित किया जाने लगा (वही: 78)।

इन मिथकों को जन-जन तक पहुँचने के लिए कई तरीकों को अपनाया जाता है। इनमें से एक तरीका भाटों से गीतों-बिरहाओं की रचना से प्रचार करना/करवाना है, जो गाँव-गाँव घूमकर इन्हें गाते रहते हैं। यह ऊँची जातियों में प्रचलित परंपरा से मिलती-जुलती चीज है, जहां 'चारण' या 'भाट' के नाम से जाने जाने वाले पेशेवर गवैये नाच-गाने के माध्यम से किसी विशेष जाति का महिमागान करते हैं (नारायण, 2002)। उत्तर प्रदेश में दलित पासियों की 'पसमांगता' नामक उपजाति है, जिनका काम पासियों की जाति-कथा सुनाना है और इनके प्रभावी अंदाज के कारण जाति-नायकों और पासी श्रोताओं के मध्य एक सूत्र स्थापित हो जाता है (नारायण, 2014: 80)। बहुजन समाजवादी पार्टी द्वारा नियोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में

'पसमंगता गीत' के माध्यम से फुले, अंबेडकर, कांशीराम, मायावती, अवंतीबाई, झलकारीबाई, बिजली पासी, उदा देवी, महावीरी देवी आदि जैसे दलित नायक-नायिकाओं का महिमामंडन किया जाता है (सिंह, 1994)।

दलित नायकों व मिथकों को दृश्य छवियों में स्थापित हो जाने के कारण क्षेत्र की संस्कृति में कई नवीन आयामों का सृजन हो रहा है। उदाहरण के लिए झलकारी बाई, उदा देवी या बिजली पासी के जन्मदिन या पुण्यतिथि पर आयोजित समारोहों में भाषणों, कविताओं, गीतों और नाट्य-मंचन जैसी धर्म-निरपेक्ष गतिविधियों के साथ-साथ धूप और अगरबत्तियाँ जलाना, मूर्तियों पर फूलों के हार चढ़ाना और उन्हें सिंदूर इत्यादि से सुशोभित करना जैसी धार्मिक रस्में भी सम्पन्न की जाने लगी हैं। इतना ही नहीं इन, अवसरों पर मंत्रों-श्लोकों इत्यादि का उच्चारण भी किया जाने लगा है, जो उच्च जातियों द्वारा किए जाने वाले पूजा-पाठ से काफी मिलती-जुलती रस्में हैं (नारायण, 2014: 84-86)। झाँसी में झलकारीबाई की मूर्ति के सामने नियमित रूप से पूजा की जाती है, जो कि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के किले के सामने स्थापित है (वही: 86)।

मिथकों से पृथक वर्चस्व की वैचारिकी

आल इंडिया बैकवर्ड स्टूडेंट्स फोरम (AIBSF) ने सामाजिक न्याय की प्रगतिशील ताकतों का आह्वान करते हुए **महिषासुर शहादत दिवस** को राष्ट्रीय स्तर पर मनाने की अपील की है। एआईबीएसएफ की तरफ से जारी एक विज्ञप्ति में कहा गया कि संगठन, वर्ष 2011 से देश के प्रमुख शिक्षण संस्थानों में महिषासुर शहादत दिवस का आयोजन करता रहा है। गत वर्ष देशभर में लगभग 60 स्थानों पर महिषासुर शहादत दिवस का आयोजन किया गया था (एफपी, 2014: 31)। ब्राह्मणवादी ताकतों से लंबा संघर्ष कर जेएनयू में महिषासुर शहादत दिवस मनाने वाले एआईबीएसएफ के राष्ट्रीय अध्यक्ष जितेंद्र यादव ने इस कार्यक्रम की महत्ता बताते हुए कहा कि महिषासुर शहादत दिवस के माध्यम से हम अपने इतिहास और नायकों को जानने की कोशिश करेंगे। उन्होंने कहा कि महिषासुर शहादत दिवस, ब्राह्मणवादी वर्चस्व के प्रतिरोध और दलित-बहुजन की सांस्कृतिक मुक्ति का आंदोलन है (वही)। उन्होंने कहा कि महिषासुर इस देश के मूलनिवासियों के राजा थे, आर्य जातियों ने जब देश पर हमला किया तो महिषासुर की संगठित सेना के सामने उन्हें कई बार परास्त होना पड़ा। अंत में उन्होंने छलपूर्वक दुर्गा को राजा महिषासुर के महल में भेजा। दुर्गा 9 दिनों तक महिषासुर के किले में रही और उसने 10वें दिन राजा महिषासुर की छलपूर्वक हत्या कर दी (वही)।

डॉ. अम्बेडकर के निर्वाण दिवस पर पटना में सामाजिक और आर्थिक बदलाव के साथ सम्मान व हिस्सेदारी की लड़ाई को तेज करने का संकल्प लिया गया। इसके साथ ही इस बात पर जोर दिया गया कि शूद्र नाम से परहेज करने के बजाय उस पर गर्व करना चाहिए। शूद्रों को हीनताबोध से मुक्त भी होना होगा। सामाजिक संस्था '**बागडोर मिशन 341**' की अगुआई में शूद्र सम्मेलन का आयोजन एस.के. मेमोरियल हॉल में सम्पन्न किया गया, इसकी अध्यक्षता शशिकांत महाराज ने की (यादव, 2015: 53)। मुख्य अतिथि के रूप में सम्मेलन को संबोधित करते हुए बिहार के वित्तमंत्री बिजेन्द्र प्रसाद यादव ने कहा, हमारी सामाजिक

व्यवस्था में भेदभाव व्याप्त है। इससे मुकाबले के लिए शिक्षा के साथ आर्थिक राजनीतिक सांस्कृतिक क्षेत्र में पहल की आवश्यकता है। लोकतंत्र के चारो स्तंभों कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका और मीडिया में शूद्रों के प्रभावकारी प्रतिनिधित्व की मुहिम चलानी चाहिए (वही)।

ज्योतिबा फुले और भीमराव अंबेडकर ने जिस सांस्कृतिक क्रांति की नींव रखी थी, वह न केवल अधूरी रह गई है बल्कि आने वाली पीढ़ियों ने उसे नजर-अंदाज किया और तोड़ा-मरोड़ा। वे लोग जो भारत के मुक्तिदायक हो सकते थे, उनका मखौल बनाया गया और उन्हें केवल नीची जातियों व अछूतों का नेता बनाकर हाशिये पर धकेल दिया गया... फुले-अंबेडकर विचारधारा की समाज की समग्र समझ, गांधी व नेहरू या तिलक व सावरकर की समझ से नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ थी क्योंकि वह दमित बहुसंख्यकों की महत्वाकांक्षाओं और चेतना की प्रतिनिधि थी (मणि, 2015: 9-16)। दलित बहुसंख्यकों का सशक्तिकरण तब तक संभव नहीं है जब तक कि फुले और अंबेडकर की मुक्तिदायिनी विचारधारा का पुनर्निर्माण नहीं किया जाता (वही)।

बिहार प्रदेश दलित आदिवासी युवा मंच द्वारा दलितों, पिछड़ों, महिलाओं, आदिवासियों, मेंहनतकशों के शोषण उत्पीड़न को हिन्दू धर्म की आचार-संहिता बनाने वाले ग्रंथ मनुस्मृति का दहन अंबेडकर चौक के पास किया (श्रवण, 2015: 28)। इस मौके पर दलित आदिवासी महिलाओं के साथ बढ़ रहे अपराध, उत्पीड़न व हिंसा के खिलाफ तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय से स्टेशन चौक तक छात्रों, नौजवानों ने मार्च निकाला, मनुस्मृति दहन के पश्चात् आयोजित नुक्कड़ सभा को संबोधित करते हुए युवा नेता ओम सुधा ने कहा,

> *"मनुस्मृति में दर्ज विचार आज भी समाज में व्याप्त हैं। इस तरह के प्रगति व दलित-आदिवासी-शूद्र-महिला विरोधी विचारों का घर समाज से सफाया करने की जरूरत है, तभी एक आधुनिक लोकतान्त्रिक और मजबूत भारत का निर्माण संभव है (वही)।"*

निष्कर्षतः इस पूरे विमर्श को एक कड़ी में सँजोने पर साफ होता है कि आदतों से ही विचार पनपते हैं और ये विचार परिवर्तित होकर प्रथा, परंपरा और रूढ़ियों का निर्माण करते हैं। इसी दिशा में मिथकों की रचना हुई जो मनुष्य को संपूर्णता में नियंत्रित और निदेशित कर सके। हुआ भी वही मिथकों ने पूरे हिन्दुत्ववादी समाज को नियंत्रित किया और उसे वैदिक निर्देशों के संरूप संचालित भी किया। निचली जाति द्वारा स्वयं के प्रति छले जाने के अहसास ने नवीन मिथकों की रचना की। ये नवीन मिथक परिभाषित तो होते हैं महान वृत्तान्तों से परंतु इनकी अपनी एक अलग स्थानीय अस्मिता होती है जो द्विज जातियों खासकर ब्राह्मणों के विरोध में उत्पन्न होती है। ये जातियाँ अपने पृथक मिथकों को गढ़ रही हैं और यह घटना पारंपरिक मिथकों के प्रति अविश्वास को सीधे तौर से प्रदर्शित करती है। अर्थात् समकालीन संदर्भ में परंपराओं के प्रहरी के रूप में खड़े मिथकों में तब्दीली की जा रही है और नवीन मिथकों की रचना की जा रही है जो कि संस्तरण की निचली जाति के आदर्श के रूप में बिठाये जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

- अमीन, एस. एवं पाण्डेय, जे. (1995). *निम्नवर्गीय प्रसंग (भाग-1).* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
- अमीन, एस. एवं पाण्डेय, जे. (2002). *निम्नवर्गीय प्रसंग (भाग-2).* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
- चौधरी, यू. एस. (2008). *हाशिये की वैचारिकी.* नई दिल्ली: अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स.
- चौबे, के. एन. (2008). जा*तियों का राजनीतिकरण.* नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन.
- दास, वी. (1977). *स्ट्रक्चर एंड कोग्निगेशन: आस्पेक्ट्स ऑफ हिन्दू कास्ट एंड रिचुअल.* नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- दुबे, ए. के. (2005). *आधुनिकता के आईने में दलित.* सी.एस.डी.एस: वाणी प्रकाशन.
- नारायण, बी. (2008). *दलित वैचारिकी की दिशाएँ.* नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन.
- नारायण, बी. (2014). *दलित वीरांगनाएँ एवं मुक्ति की चाह.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
- नारायण, बी. (2014). *हिन्दुत्व का मोहिनी मंत्र.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
- नाथ, बी.एस. (1998). *1857 की क्रांति का जनक.* इलाहाबाद: मिलन प्रकाशन.
- पासी, आर.के. (1996). *रायबरेली में पासी राजभर.* लखनऊ: पासी शोध संस्थान.
- शर्मा, आर (1992). *शूद्रों का इतिहास.* नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
- सिंह, आर.के. (1994). *कांशीराम और बीएसपी.* इलाहाबाद: कुशवाहा पब्लिकेशन.
- सिंह, एस. (2009). *चमार जाति का गौरवशाली इतिहास.* नई दिल्ली: सम्यक प्रकाशन.
- नारायण, बी. (2013, जनवरी-जून). लोकतन्त्र का भिक्षु गीत: अति-उपेक्षित दलितों के अध्ययन की एक प्रस्तावना. *प्रतिमान*, पृ. 73-98.
- मणि, बी. (2015, अप्रैल). नवीकृत फुले-अंबेडकरवाद की आवश्यकता. *फॉरवर्ड प्रेस*, पृ. 9-16.
- यादव, बी. (2015, जनवरी). 'शूद्र होने पर गर्व'. *फॉरवर्ड प्रेस*, पृ. 53.
- श्रवण. (2015, फरवरी). भागलपुर में 'मनुस्मृति' दहन. *फॉरवर्ड प्रेस*, पृ. 28.
- संवाददाता, एफपी. (2014, सितंबर). 9 अक्टूबर: महिषासुर शहादत दिवस. *फॉरवर्ड प्रेस*, पृ. 31.